हो समाज एवं संस्कृति

गौरी शंकर बिरूआ

भारतीय गणराज्य संघ के प्रायः सभी राज्यों में अनुसूचित जनजाति की आबादी है। इनमें से कुछ ऐसे भी राज्य जहां पर इनकी आबादी ज्यादा है। इन राज्यों में बिहार, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल आदि राज्यों में अनुसूचित जन-जाति के लोग अधिक संख्या में बसते हैं। प्रत्येक समूह (वर्ग) की रहन-सहन, रीति-रिवाज, खान-पहन, भाषा-साहित्य एवं धार्मिक पद्धति एवं मान्यतायें भिन्न-भिन्न है। मैं अपना ध्यान विशेषकरिबहार, उड़िसा, मध्य प्रदेश एवं पश्चिम बंगाल में सुचीबद्ध जन-जातियों पर ही केन्द्रीत करना चाहूँगा।

अब तक ही सूचीबद्ध जनजातियों की संख्या में बंगाल में लगभग 41, बिहार में 30, उड़ीसा में 60 तथा मध्यप्रदेश में 66 प्रतिशत है। इन चार राज्यों में हो, मुन्डा, उरांव तथा संताल (संथाल शब्द अबतक की प्राप्त सामग्री से अपभ्रष्ट शब्द है) लोग ऑरिजन माना गया है। लेकिन हो, मुण्डा तथा संताल जाति को कोलारियन रेस माना गया है। मुण्डा, हो एवं संताल जाति का पौराणिक किंवदती एक ही तरह लगभग कहा जाता है। इन्हें सम्प्रति दो प्रचिलत नामों से जाना जाता है "आदिवासी" एवं 'जन-जाति'। आदिवासी का शाब्दिक अर्थ भी कुछ ऐसा संबोधन करता है जिसमें यह स्पष्ट होता जाता है कि पुरातनकाल से जो जाति इस सूभाग पर निवास करती है, वही आदिवासी है। दुःखद बात यह है क सरकार द्वारा हमें (इन्हें) अनुसूचित जनजाति कहा है, जिसमें ऐसा प्रतीत होता है क सरकार ने हमारी पौराणिक वासी था आदिवासी नहीं कह कर हमारी प्राचीनता की मौलिकता पर आक्रमण कर नष्ट करता प्रतीत हो रहा है। इस यह कहने में कोई अतिश्योक्ति नहीं है कि सरकार के द्वारा इन्हें पुरातनवासी (आदिवासी) नहीं मान कर हमारी अस्तित्व को संदेहात्मक बनाने का प्रयास किया गया है तथा हमारी जाति-वर्ग एवं समुदाय को करने का इंतजाम लिया प्रतीत हो रहा है। जन-जाति कहने से "एक समान संस्कृति एवं धार्मिक विश्वास वाली जनसंख्या का स्वतंत्र राजनीतिक पद्धति के आधार पर विभाजित जनसंख्या का बोध होता प्रतीत होता है।"

विशेषतायें जो भी है अब Rolarian Race की एक शाखा (वर्ग) "हो" जनजाति पर अपना ध्यान केन्द्रित कर रहा हूँ। "हो" जनजाति की उतपित एवं आगमन की विवादस्पद विषय पर से हट कर उनकी समाज एवं संस्कृति पर प्रकाश डालने का प्रयास किया जा रहा है। "हो" HO कहने से समस्त मानव जाति का बोध होता है। इनका प्रकृति के सानिध्य एवं निकस्थ रहने केकारण इनकेसमजा का प्रत्येक अंग प्रकृति से प्रभावित है तदनुसार इन्हें प्रकृति के उपासक कहा जाता है। इनका धर्म "हो धर्म" (मानवधर्म) कहा जाता है। जो
"हो धर्म" को बोध करता प्रतीत होता है। इस परिप्रेक्षय में यिद "जन-जाति" शब्द पर भी विवेचन किया जाये

तो दोनों की सामज्यस्ता में विवाद नहीं होना चाहिए। "जन-जाति" का अर्थ है, जनलोग (मनुष्य मात्र), जाति वर्ग या समुदाय होता है अर्थात जन जाति का अर्थ मानव समुदाय, या मानवजाति का वर्ण या समाज का समुदाय कहा जाना ही उचित प्रतीत हो रहा है।इस प्रकार "हो जाति" या "जैन जाति" कहने से आदिवासी वर्ग की एक खास समुदाय का बोध होता है।

हो जाति आदि काल से ही आगमन के आरम्भिक काल से सिंहभूम जिला उड़ीसा के म्युरभंज, क्योंझर एवं सुंदरगढ़ जिलों में अधिकाधिक संख्या में निवास करती आ रही है। इनकी अपनी समाज है, संस्कृति है, भाषा है, धर्म है एवं रूढ़िगत परम्परा है। इसे अभी तक अक्षुण्य बनाये रखा है। आज भी इनकी धार्मिक एवं सामाजिक कार्य तथा सांस्कृतिक उत्सव अपनी ही मान्यता एवं परम्परा पर आधारित एवं अवलम्बित है। 'हो' जाति की कोई उपजाति नहीं है। ये सभी एक ही वर्ग या समुदाय के है। इनका विभाजन केवल "किली" के जरिये हुआ है और इसी अधारभूत विभाजन के अनुसार जाति के अन्दर लेकिन किली से बाहर आपस में व्याह-शादी हुआ करता है। इसिलए कहा गया है कि 'हो' जाति शादी-व्याह के लिए जाति के अन्दर वर-वधू की खोज करती है लेकिन किली से बाहर निकल कर होता है। एक किली के लोगों का समुदाय दूसरे किली की समुदाय के साथ ही वैवाहिक संबंध स्थापित करता है। कुछ समुदाय के 'किली' से भाई-बंधु का रिश्ता बनाक वैवाहिक संबंध से परहेज करते हैं। कहा गया कि जाति की पहचान का आधार धर्म या लिप या साहित्य से नहीं हुआ करती है बल्कि समाज में प्रचिलत सामाजिक परम्परा (रूढ़ि जन्य नियम या आदत) एवं संस्कृति से होती है। आज शिक्षा के प्रगित के साथ ही 'हो' जाति के लोगों में शादी-ब्याह समाज की सभी परम्पराओं का यथाशक्ति निर्वहन करते हुए कम से कम खर्च एवं समय में किया जाने लगा है। वैवाहिक कार्यों में 'हो' समाज में 'इली' पीने की परमपरा है जिसे सामान्य खर्च के अलावा फिजूल खर्च के रूप में ही अधिक देखा जा रहा है। इस पर प्रतिबंधित नहीं बल्कि सीमित करने की आवश्यकता है।m कुछ शिक्षत एवं आधुनिकता के रंग में आ चुके 'हो' परिवार द्वारा कुछ सीमा तक प्रचिलत परम्परा से हटकर भी शादी सम्पन्न करहे हैं लेकिन इनकी संख्या नगण्य है।

अन्य जन-जातियों की तरह इनमें आरम्भ ही "घोटल" या "गितअ ओड़ाअ" बनाने की परम्परा नहीं रही है। इनके बच्चे-बिच्चयाँ समाज में ही स्वाभाविक जीवन निर्वाह कर अनुभव एवं स्वतंत्र-रूप से प्राप्त करते हैं। इनके बीच में आज सभ्य समाज के पोशक पहनावा का अवलोकन कर सामाथ्यं अनुसार धारण करने का अद्‌भूत क्षमता है। यह विशेषता जनजाति के अन्य वर्गों में जेसे - असूर, बैगा, जुआंग, बिरहोर आदि में नहीं देखा जा रहा है। इसके परिणामस्वरूप शिक्षत एवं अशिक्षत के पहनावा को देख कर अन्तरण करना किठन हो जाता है। 'हो' जाति की मिहलाएं स्थान विशेष एवं कार्य के प्रकार के आलोक में पुरूषों से भी अधिक शारीरिक श्रम करती पायी जाती है।

गांव घर की मिहलायें गांव के या पर्रिचत किसी वरिष्ठ स्त्री या पुरूष सदस्यों की नेतृत्व में ईंट-भट् ठों या अन्य कल कारखानों वाली शहरों में जाकर सुबह से शाम तक परिश्रम करती है, वहीं दूसरी ओर गांव के अन्य पुरूष सदस्य गांवों के चौपाल जमाकर या गाठ के नीचे किसी ससनिदरी के ऊपर निखटू की तरह बैठकर बीड़ी, खैनी का आनन्द उठाते रहते रहते हैं या शराबखाना में गर्म पेय का पान करते हुए दिन व्यतीत करते रहते हैं। गांवों में मिहलायें ही धान-रोपनी, घास-निकौनी या धान-कटनी आदि का काम करती रहती है और पुरूष सदस्य किसी अन्य रूप में सहायता पहुंचाने के बदले मौज-मस्ती से इधर उधर मटरगश्ती करते रहते हैं। ऐसा समझा जा सकता है कि परिवार के सदस्यों की पालन-पोषण की धूरी (गपे) बहुत हद तक मिहलाओं पर ही निर्भर करती है।

'हो' जाति में मृत्यु होने पर इनका भी संस्कार की पृथक व्यवस्था है जिनके दायरे के अन्दर नियमों एवं परंपराओं का पालन कर संस्कार रूप से सम्पन्न किये जाते हैं। यहां यह कह देने में कोई अत्युक्ति नहीं है कि इनके विश्वास के अनुसार मृत्यु केवल शरीर की होती है आत्मा की नहीं होती है। इसी विश्वास पर आधारित इनके संस्कार में पारिवारिक सदस्य की मृत्यु के बाद शरीर (मृत्युक शरीर) केा दफनाने या जलाने के बाद 3 से 7 दिन के भीतर गृह परिसर एवं मुख्य निवास घर की सफाई करने के पश्चात सायंकाल (रात्रि ढलने के पूर्व) रसोईघर की अन्दरूनी भाग ''अदिंग'' में मृतत्मा वनस जीम कमंक को आकर स्थान ग्रहण करने के लिए आह्वान किया जाता है। उनकी (मृतक को) आत्मा किसी न किसी जीव-जन्तु का रूप धारण कर अदृश्य रूप में "अदिंग" में प्रवेश कर जाता है, तब उनकी कुल देवता के रूप में यथा "हाम हो को" "ओवाअ" "ओवाम गोयको" के रूप में प्रतिष्ठित स्थान मिलता है। इनकी सेवा पर्व-त्योहार एवं अन्य संकट के समय में भी यथाचित सामग्री से किया जाता है। "ओवाम गोयको" के रूप में प्रतिष्ठित स्थान मिलता है। इनकी सेवा पर्व-त्योहार एवं अन्य संकट के समय में भी यथोचित सामग्री से किया जाता है। 'हो' जाति वैसे मृतकों की आत्मा को "अदिंग" में स्थान नहीं दे पाता है जिनकी मृत्यु आकस्मिक या अप्राकृतिक या छुआछुत के रोग से हुई होती है। स्वर्ग या नरक की कल्पना इस जाति में नहीं है। इस क्रम में यह ज्ञातव्य है कि कहीं पर सौगंध खाने या शपथ खिलाने के समय कहा जाता है "अगर हम झूठ बोल रहे हैं तो जंगल में बाघ उठा कर खा ले" या "विषैला सांप के काटने से मेरी मृत्यु हो जाय" या "गाछ पर गिरने के क्रम में मेरी मृत्यु हो जाये"। इसमें यह नहीं कहा जाते पाया गया कि "मुझे नारकीय यंत्रणा/कष्ट मिले। धारणा ऐसी है कि हम सब धरती पर निवास करते हैं और यथोचित उम्र प्राप्त कर मृत्यु का वरण करते हैं।

'हो' जाति का विश्वास है कि मनुष्य मात्र में बीमारी होने के कुछ प्रमुख कारण है - देवी देवताओं की नाराजगी से, बुरी नजर पड़ने से, (डायन प्रथा की प्रचलन से), किसी गुणी व्यक्ति की गलत नीयत या दृष्टि से इनके शमन का तरीका पशु-पक्षी या उनके लिये निर्धारित सामग्री के प्रत्यार्पण से या बली-

चढ़ाने का माना गया है। वली देने से या शमन करने हेतु उपाय रचने के क्रम में खास तरह का मंत्रोचरण से आराधना की जाती है। इसी कारणवश आज भी ग्रामीण आबादी की अधिकाधिक संख्या किसी साधारण बीमारी ीाी घातक रूप धारण कर लेता है और उसका ग्रास बनता जाता है। बीमारी की इलाज के लिये ंचिकत्सक के पास या ंचिकत्सालय की शरण में बहुत कम प्रबुद्ध लोग ही जाया करते हैं। यह अशिक्षा और अज्ञानता के कारण होता है। लेकिन यह भी शतप्रतिशत सही है कि देहातो में (ग्रामीण इलाकों में) आधुनिक चिकित्सा की सुविधा उपलब्ध नहीं है। सरकार की दृष्टि इस ओर बिल्कुल नहीं है। यदि है भी तो समुचित ध्यान के अभाव में काफी ढीला है। डायन विद्या के प्रभाव से या म्गवतबपेउ पर निज मनुष्य की हानि से कभी-कभी हत्यायें भी होती रहती है। यद्यपि यह विश्वास किया जाता है कि इस तरह की प्रथा पर केवल अशिक्षित एवं अंधविश्वास वर्ग ही प्रभावित होता माना गया है लेकिन यह भी पाया गया है कि पढ़े-लिखे प्रबुद्ध वर्ग भी आधारहीन तथ्यों एवं विद्या पर विश्वास कर दुरूपयोग करते रहते हैं।

स्वतंत्रता की प्राप्ति के पूर्व तक इनकी सामाजिक स्थित पर प्रबुद्ध वर्ग के विचारों का प्रभाव नगण्य रहने के कारण अर्वाचीन नहीं कहा जायेगा। इनके निवास स्थलों पर गैर-जनजाति को समागम नहीं रहने तथा जाति वर्ग के सदस्यों के द्वारा भी बाहरी दुनिया की प्रगितशील वैज्ञानिक विचारों से सम्पर्क नहीं रहने के कारण ये जीवन की दौड़ में पिछड़ते गये हैं। लेकिन इसकी मुल्य को लोगों ने समझा है और आज स्थित में बदलाव आता जा रहा है। 'हो' समाज की राजनीतिक और सामाजिक इकाई गांव "हातु" हुआ करता है। एक गांव में एक ही किली का बास अधिक संख्या में हुआ करता था जो "ग्राम स्थापक" का होता था। लेकिन धीरे-धीरे अन्य किली के लोग भी आकर बसते गये। इसिलए गांव को 'परिवार' या 'किली' से अलग कर नहीं देखा जा सकता है। आरम्भिक काल में हो जनजाति के बीच सामाजिक पृथकता पायी जाती थी अर्थात एक ही सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत ंविभन्न "किली" या "समुदाय" के साथ खान-पान में भेद भाव बरतने का दृष्टान्त मिलता है यद्यपि इसका कोई सामाजिक एवं जातीय आधार नहीं था। समय के साथ इसमें बदलाव आता गया और आज भी स्थित में यह प्रःय लोप हो गया। गर आदिवासी के साथ एंव मिशनरी संस्थाओं के सम्पक्र में आने के साथ ही इनके दृष्टिकोण्ध में परिवर्तन होता गया। गैर-आदिवासी के साथ इनका सम्पर्क हाट-बाजार, स्कूल-कालेज, कोर्ट-कचहरी तथा कल-कारखानों में सम्पर्क एवं विचारों का समागम होने के क्रम में 'हो' जाति का बौद्धक विकास होने से आर्थिक समृद्धि एवं धार्मिक सिहष्णुता की वृद्धि होती गयी, यद्यपि यह परिवर्तन साहित्य, भाषा, समाज एवं संस्कृति तथा धर्म-कर्म की पद्धति में बदलाव ही नहीं, बिखराव भी आता गया है। इसे सही रास्ता पर लाने एवं रखने के लिए समाज के विद्धतजन को प्रयास करने की जरूरत देखी जा रही है।

जीवन के सभी क्षेत्रों में आज यद्यपि थोड़ा प्रगति के लक्षण का दृष्टिगोचर हो रहा है, वह अंग्रेज शासकों की देन ही ही का जायेगा ये लोग शासन पद्धति की स्वीकार्य नियमों के परिप्रेक्ष्य में ही ध्यान देने का यथा साध्य प्रयास किया है। स्वतंत्रता की प्राप्ति के पश्चात की सरकार की नीतियों एवं उनके कार्यान्वयन की दृष्टि से ऐसा प्रतीत हो रहा है कि इस जाति वर्ग के सदस्यों से सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, शैक्षणिक एवं आर्थिक मुल्यों में प्रगित एवं समृद्धि लाने की नीति के अनुशीलन में एक ऐसा वर्ग विकिसत करने में सहायक साबित होता हुआ नजर आ रहा है जिन्हें अपनी जाति, धर्म, साहित्य, समाज एंव परम्परा तथा रीति-रिवाज की संधारित एवं संचारित करते हुए विकास पथ पर सदगित से अग्रसर होने की ललक नगण्य हो गयी है, चूंकि ऐसा लगता है कि यद्यपि नीति-निर्धारकों के द्वारा प्रगित के ईमानदार प्रयास को दूषित एवं दोषपूर्ण तरीके से कार्यान्वयन की जाती है। परिणामस्वरूप जन-जातियों को समाज एवं देश की मुख्य धारा में लाने के लिए सरकार की र्निनतयों एवं संविधान की सार्वजिनक कल्याण की अवधारणा को राजनीति एवं स्वार्थपरख नीतियों में प्राथिमकता दे रहे हैं। इस तरह कल्याणकारी कार्यों में संलगन सरकार के कर्मचारी, सामाजिक संस्थाओं (ऐच्छिक संस्थाओं) के स्वयं सेवक यर्थात रूप में नीतियों का कार्यान्वयन नहीं कर अपनी नीजी एवं राजनीतिक स्वार्थ से प्रेरित होकर कल्याणकारक कम बल्कि स्वार्थपरक अर्थलोलुप ज्यादा दिखाई पड़ने दिखाई पड़ने लगे है। इसके परिणामस्वरूप सीधा-सादा एवं निष्कपट जन-जाति विशेषकर 'हो', एवं 'मुण्डा', एवं 'संथाल' ही नहीं बल्कि प्रायः सभी वर्ग एवं समुदाय के जन-जाति की विचारधारा में रीति-रिवाज की परम्परा की प्रतिष्ठा सभ्यता एवं संस्कृति की मिहमा तथा समाज की प्रतिष्ठापूर्ण गरिमा के संथारण एवं पोषण तथा अनुशीलन में बिखराव एवं विकृति का अहिस्ता-आहिस्ता प्रवेश हो रहा है। 'हो' जन-जाति सागदी पसंद ईमादान
प्राणी है। इनमें नीति एवं अनुपालन की चाहत जन्म
जन्मान्तर से पायी जाती है लेकिन आज के युग प्रभाव से, बाहरी व्यक्तियों के संसर्ग से तथा बाहरी प्रदेशों से आकर कुछ ही समय में धनवान बनते देखकर उनके मन में भी लोभ पैदा हो रहा है तथा अनैतिक आचरण का सहारा मजबूरीवश लेने या पकड़कर बिना किये धनवान बनने की ललक एवं चाहत को रोक रखने में असमर्थ पा रहे हैं। लेकिन जन-जाति में बाघ की फूर्ती, सियार की चालाकी एवं कौवे की चतुराई जैसी गुणों के अभाव में भटक कर ही रह जाते हैं। हम जनजाति लोग उधार के पंख से ही अपने
को सुसिज्जत कर गर्वान्वित अनुभव करते है।

आज की प्रतियोगिता के युग में हमें सभी क्षेत्रों में अन्य समुदाय से बराबरी करने तथा उनसे भी अव्वल आने के लिये तथा आपस की प्रतियोगिता के होड़ में आगे बढ़ने के लिये हमें (जन-जाति वर्ग) सामाजिक, शैक्षणिक एवं राजनीतिक गुणों से सम्पन्न एवं आज की कपटपूर्ण कुटिल एवं क्रुर नीति के जानकार एवं संयमी व्यक्ति या व्यक्ति के समुह केा मार्क-दर्शक बनकर प्रस्तुत होने का समय आ गया है तथा जन-जाति के सदस्य भी प्राचीनकाल की तरह निज-जाति एवं बलबुद्धि के अह्म को त्याग कर प्रबुद्ध वर्ग के विशिष्ट गुणों के अभाव

में अथवा अनुपस्थित होने की अवस्था में हममें विश्वास का संकट पैदा होने की शत प्रतिशत गुंजाईश बनती है और हम सभी साधनों, सुविधाओं एवं दिशा निर्देशन के पश्चात भी परिणाम प्राप्त करने में कोसों दूर रह जायेंगे।

आईये, हम सब इस संकल्प के साथ दृष्ढ़ता से अपने को समृद्ध बनायें एवं भारत को समृद्ध बनाने की दिशा में अग्रसर हों।

हो भाषा - परिचय एवं विशेषताएँ

भाषा समाज एवं उनकी संस्कृति का एक अभिन्न अंग है जो पीढ़ी दर पीढ़ी चली आ आरही है। पैतृक सम्पत्ति के समान है और संस्कृति की तरह रूढ़ि है जो कालक्रम से समाज की क्षमता और सजीवता का प्रतीक होता है।

जिस तरह मानव समुदाय को चार प्रशाखाओं : कौसासोएड (Causasoid) मोंगोलोएड (Mangoloid) और निग्रोलाएड (Negroloid) में विभक्त किया गया है। उसी प्रकार भाषा परिवार को भी चार भागों: इंडो इरानियन (Indo Iranian) ड्राविडियन (Dravidian) आस्ट्रोएशियटिक (Austroasiatic) तथा सिनो तिवेतन (Sino-Tibetan) में परिसीमित किया गया जिसमें से हो भाषा ऑस्ट्रोऐशियटिक मुंडा परिवार की भाषा है जो भारत की प्राचीनतम भाषा है।

हो भाषा एक बोली है और व्याकरण द्वारा संस्कार का परिचिन्हित नहीं किया गया जैसा कि ई0 पू0 2000 के आसा-पास पननी संस्कृत को पाणिनि और कत्यायन व्याकरण के नियम से सूत्रबद्ध कर परिनिष्ठित किया ऐतहासिक घटनाक्रमों के उथल-पुथल तथा घात-प्रतिघात के साथ अनवरत संघर्षरत रहने के उपरांत भी अन्य भारतीय भाषाओं की भांति प्राकृत तथा अपभ्रंश काल में स्वत: हुए भाषा विकारों के हो भाषा ने नहीं झेला। बल्कि व्याकरण, लिपि, साहित्य तथा ऋषि-मिनिषयों के वगैर भी हो भाषा आज भी उतना ही मौलिक रूप में प्राकृतिक नियमबद्ध शुद्ध भाषा है जितना सुदूर ई0 पू0 अज्ञातकाल में था।

भारतीय आर्य भाषाओं का अपभ्रंश काल 1100 ई0 के आस पाए समाप्ति के उरांत 14वीं शताब्दी से आधुनिक आर्य भाषओं का स्पष्ट रूप सामने आने लगा। इन्साईक्लौपिडिया ब्रटेनिका के अनुसार भाषाओं की उत्पति विभिन्न अपभ्रंशों से शताब्दीवार उत्पति निम्न प्रकार हुई।

12वीं शताब्दी में - गुजराती

13वीं शताब्दी में - मैथिली

15वीं शताब्दी में - असामी

15वीं शताब्दी में - बंगला

15वीं शताब्दी में - उड़िया

17वीं शताब्दी में - उर्दू

वैदिक तथा उत्तर वैदिक साहित्य में िहन्दी तथा हिन्दू का उल्लेख नहीं मिलता है। 13वीं शताब्दी के उत्तरा द्र्ध में अमीर खुसरो अपनी कविता में हिन्दवी शब्द को जन्म दिया जो महावीर प्रसाद द्विवेदी काल की रबड़ी बोली में हिन्दी नाम से प्रख्या हुआ।

डॉ0 पदम सिंह शर्मा 'कमलेश' के द्वारा प्रतिपादित तीन सिद्धान्त की समानता, ध्वनि की समानता तथा व्याकरण की समानता के आलोक में हो भाषा अौर संस्कृत में अधिक समानता और निकटता है। उदहरणत:

शब्दावली में समानता

हो	संस्कृत	हो	संस्कृत
पताड़	पत्रम्	सूतम	सूत्रम्
ऑग	अहम्	दातारोम	दात्री
मड्कम		कातु	कातु
दारू	तरू,	कादल	कदली
हाट	हटे	पोड़ोषो	पोड़ष

धविन की समानता

हो भाषा में संस्कृत शब्दों की तरह विसर्ग, अनुस्वर तथा हलंत् का अध्याधिक प्रयोग होनेके कारण संस्कृत के साथ धिन में समानता है। यथा :-

एतं चपं चेरेया दिरिद (पतला पुट्टा नूकील सींग) - याने गाय।

ओऽम् जोऽहरम् तिंग दोऽम् (सर्वशक्तिमान की करबद्ध नमन) - भगवान को

एलंङ दोलंङ सेनोवा - चलो हमदोनों चलते हैं।

अंड चंप तुर्इ चंप रे - फौ फटते ही।

व्याकरण की समानता

संस्कृत व्याकरण की तरह हो भाषा में े तीन वचन तीन पुरूष और कार होते हैं। यथा :-

लकार (संस्कृत)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरूष	ति	त:	अन्ति
मध्यम पुरूष	सि	थ:	थ
उत्तम पुरूष	आमि	आव:	आम:

लकार (हो भाषा)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरूष	तनाए	तनाकिंग	तनाको
मध्यम पुरूष	तनाम्	तनावेन्	तनापे
उत्तम पुरूष	तनांज्ञ	तनालिंज्ञ	तनाते

जोम (धातु) - खाना का रूपान्तर

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरूष	जोम तनाए:	जोम तनाकिंग	जोम तनाको
	(वह खा रहा है)	(वे दोनों खा रहे हैं)	(वे लोग खा रहे हैं)
मध्यम पुरूष	जोमतनाम	जोमतनावेन	जोमतनापे

	(तुम खा रहे हो)	(तुम दोनों खा रहे हो)	(तुम लोग खा रहे हो)
	जोमतनांग	जोमतनालिंग	जोमतनाले
	(मैं खा रहा हूँ)	(हम दोनों खा रहें हैं)	(हमलोग खा रहे हैं)
उत्तम पुरूष	आँग	आलिंत्र	आले
	अहं	आवां	वयं

संस्कृत की तरह निर्जीव आैर सजीव के लिए अलग-अलग सर्वनाम का प्रयोग होता है। यथा :-

संस्कृत में - इदम् पाषाण अस्ति (िनर्जीव)

स: बालक: अस्ति (सजीव)

हो : ने: ऐ: दिरी (तना)(निर्जीव) यह पत्थर है

नीं/दो हो (तना)(सजीव) यह आदमी है।

हो भाषा में महाप्राण का प्रयोग बिरले ही होता है। किसी क्रिया विशेष पर जोर देने के

लिए महाप्राण का उच्चारण स्वत: होता है। उदहरणत:

नी 'तामी में' - इसको पीटो।

नी 'थामी' में - इसको पीटो ही।

संस्कृत, पालि तथा प्राकृत संयोगात्मक भाषाएँ थी किन्तु अपभ्रंश भाषा वियोगात्मक हो गयी। संयोगात्मक भाषाओं में संज्ञान, सर्वनाम के साथ के साथ विभक्तियाँ लगती है। संस्कृत की तरह हो भाषा में संयोगात्मक है हिन्दी की तरह वियोगात्मक नहीं।

यथा - रामस्य गृहम् - राम का घर

रा'म:ह ओवा: - राम का घर

हो भाषा में संज्ञा या क्रियाओं के साथ उपसर्ग और प्रत्यय का एक साथ प्रयोग होना विशेषता है।

यथा : जोम् क्रिया के पहले और अंत में उपसर्ग और प्रत्यय :-

जो'जोम तेया - पात्र जिस पर खाते हैं।

मा: क्रिया - मा'मा:तेया - जिससे काटते हैं।

केवल प्रत्यय रहने पर - जोमेतेया: - खाद्य पदार्थ

मा: ऐतेया: - काटा जाने वाला

वचन के अनुसार प्रत्यय में होने वाले शिकार से सजीर और निर्जीव को बोध होता है।

यथा - म' डीनीं - पकानेवाले (सजीव)

मंडी' तेया - पात्र जिसमें पकाते है (निर्जीव)

हो भाषा में प्रत्युरत्तरात्मक क्रियाओं की प्रचुरता है जो केवल द्विवचन और बहुवचन में प्रयोग होता है। यथा : -

नेल् देखना - नेपेल-एक दूसरे को देखना

ताम् (पीटना) - नापाम् - एक दूसरे को पीटना

ओर - देखना - ओपोल-एक दूसरे को लिखना

सुकु-पसंद - सुपुकु-एक दूसरे को पसंद करना

प्रत्युरात्मक क्रियाएं बनाने के लिए क्रिया के बीच में प वर्ण का प्रयोग होता है। क्रिया के प्रथम वर्ण में जो मात्रा लगती है, वर्णों के बीच में आने वाला वर्ण 'प' पर भी वही मात्रा लगती है जो ऊपर दिए गए क्रयाओं से स्पष्ट होता है।

अपवाद :- क्रिया के अंत में 'प' वर्ण आने पर द्विवचन और बहुवचन में प्रत्यत्तरात्मक क्रियाओं का स्वरूप निम्न प्रकार बनता है। यथा रुपु क्रिया।

द्विवचन बहुवचन

प्रथम पुरूष वह दोनों एक दूसरे को पीट रहा है। वे लोग एक दूसरे को पीट रहे हैं।

मध्यम पुरूष रूपुतनाबेन रुपुतनापे

तुम दोनों एक दूसरे को पीट रहे हो तुमलोग एक दूसरे को पीट रहे है

उत्तम पुरूष रूपतनालिंत्र

हम दोनों एक दूसरे को पीट रहे हैं। हमलोग एक दूसरे को पीट रहे हैं।

कथन के अनुसार रूपान्तरित क्रियाओं का सार्थक अर्थ बिना कर्ता के अन्य भाषाओं में नहीं होता है। हो भाषा में उपस्थिति तथा अनुपस्थिति बोधक क्रियाएं होती है। पुरूष और वचन के विकास में रूपान्तरित क्रियाऐं कर्ता के वगैर सार्थक होती है। ऐसी क्रियाओं का प्रयोग द्विवचन अौर बहुवचन में केवल उत्तम पुरूष के लिए होता है। यथा

सेन धातु

	द्विवचन	बहुवचन
उत्तम पुरूष	(1) सेनो:वालंड़	(2) सेनो : बाबू
	हम दोनों जायेंगे	हमलोग जायेंगे।
	(3) सेनो: वालिंत्र	हमलोग जायेंगे।

प्रथम - सेनों:वालंड से तात्पर्य है - मुझे उन्हीं के साथ चलना है जो सामने उपस्थित है और साथ चलने के लिए मैं उन्हीं से कह रहा हूँ।

द्वितीय - सेनो : बाबू से अभिप्राय है - मुझे उनलोगों के साथ चलना है जो मेरे सामने मौजूद है और साथ चलने के लिए उन्हीं लोगों से कह भी रहा हूँ।

तृतीय : सेनों:वालिड. से आशय है कि मुझे उनके (ज्ञान व्यक्ति) साथ चलना है जो कथन के समय उपस्थित व्यक्ति या व्यक्तियों से प्रकट कर रहा हूँ

जिनको मेरे साथ चलना नहीं है।

चौथा :- सेनाे: वाले से अर्थ है कि मुझे उन ज्ञात लेगों के साथ चलना है जो कथन के समय सामने मौजूद नहीं है परन्तु चलने की बात मैं उन उपस्थित व्यक्तियों से कह रहा हूँ जिनकाे मेरे साथ चलना नहीं है।

संज्ञा, विशेषण तथा क्रिया विशेषण भी पुरूष तथा वचन के विकार से क्रियाओं से रूपान्तरित होता है।

यथा

व्यक्तिवाचक संज्ञा : राम-एसूम रा' मो: तना - बहुत न राम बन रही हो।

विशेषण : हेन्दे (काला) - पुंडि वाले, हेन्देन में। सफेद बालों को काला करो

क्रिया विशेषण : आँजा - आँजा पाईटीयोतना-जल्दी जल्दी काम हो रहा है। सुहाय सुहायाएपे धीरे काम करो यो ऑजा-ओजानपे जल्दी काम करो। संस्कृत में संधि विच्छेद कर अर्थ निकालते हैं। जैसे सत्यम् शिवम् सुन्दरम्

सति+आयम - तुम ही सत्य हो

सत्य - यह सत्य है - होना चाहिए -

हो भाषा में - सत्य + अम्, अम् तुम सत्यम का अर्थ - तुम्ही सत्य हो जो संधि विच्छेदानुसार सटीक भी है।

राजगीर के विश्वशांति स्तुप के मुख्य द्वार पर लिखा हुआ है "नमो: मेऽमो: होऽ रेगे: क्यों" जिसका अर्थ संस्कृत और पाली भाषा में आज तक स्पष्ट नहीं किया जा सका। हो भाषा में प्रकार पढ़ते हैं - नमो: मेंयां हो रेगे कयों। क्यों माने घबड़ाहट में निकलने वाली मुर्गा या मुर्गी अवाज। संस्कृत के अक्षरम् शब्दम् ब्रह्म े आलोक में शब्द याने आवाज भगवन है जिसके आधार पर हो भाषा में उसका शब्दार्थ होता है, भगवान निवास मानवशरीर में ही होता है जो दार्शनिक दृष्टिकोण से बोधगम्य भी है।

राजगीर के वीरायतन म्युजियम में प्रवेश के समय वापस किया जाने वाला अधकटी टिकट पर "दिन्नम् हयोति सुनीहतं" लिखा हुआ है जिसका अनुवाद अधकटी पर इस प्रकार किया गया है दान में दिया हुआ ही सुरक्षित रहता है उक्त सुक्ति के तीन शब्दों में से किसी भी शब्द का अर्थ न तो दान और न ही सुरक्षा होता है। हो भाषा के अनुसार दिन्नम माने दिनगे (हर दिन) हयोति

(हयाति) माने चाहना और सुनीहतं माने सिद्ध सिद्ध आत्मा (पुरूष) या भगवान हो भाषा में इसका शाब्दिक अर्थ होता है सिद्ध आत्मा (पुरूष) या भगवान को को हर दिन हरकोई चाहते हैं जो शब्दार्थ के अनुकूल सटीक है।

तकनीकि शब्दों को छोड़कर बोल चाल की भाषा में परिस्थितिजन्य शब्दों की अधिकता है जो शब्द चित्र को दर्शाता है।

यथा - हुरला, सो 'र, हेर' तथा तेर जिनके लिए हिन्दी में केवल एक शब्द फेकना है। हुरला से तात्पर्य - कोई लम्बा टुकड़ा को फेकने पर उलट-पुलट कर हवा में गतिमान होना।

सों/र से मतलब - किसी लम्बा टुकड़ा को फेंकने पर तीर की तरह सीधे गतिमान हो।

तेर से तात्पर्य - किसी ठोस को हाथ से पकड़ कर फेंकना

हेर से मतलब - रवादार टुकड़ों को पकड़कर फेंकने पर छितरना।

उसी तरह के सबू, चिपुड़, सिपिड., तेला, तिंड., तोबाबू, गाति (पकड़ना के अर्थ में) तथा मा:अ, गेड, तोपांग, रेड़े' हेसे, रचाम, हुअ ईर, समा:अ (काटने के अर्थ) इत्यादि शब्दों का भण्डार है। संस्कृत की तरह पूजा अर्चना के समय का हेा भाषा में भी भिन्न उच्चारण के साथ विशेष भाषा का व्यवहार होता है। यथा :-

सैयड़ा सुतम् सैयड़ा कोड़ोड. ते

उपन जपन केन सिंहबोगा

पुंजिकेन् पोवाकेन हराकेन् दरूकेनम,

अम: पोरजा पाईकि होन गंणा को

नेलनेम् अतेनलेम् होरोलेम्जांगिलेम्

साँस रूपी सुता के प्रतिघात से

स्वयंभू के विस्तारिक - हे भगवान

सृष्टि अभिवृद्धि के पोषणकर्ता

तुम्हारी शाखा-प्रशाखा हम मानव का

समुचित देखभाल तथा प्रतिरक्षा करो।

व्याकरण के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट है कि हो भाषा संस्कृत के पूर्ववर्ती भाषा है जिससे शब्दों के आत्मसात् कर संस्कृत की अभिवृद्धि की गई है। इसका सत्यापन ए0 बी0 कीथ द्वारा रचित संस्कृत साहित्य का इतिहास (1870) में उद्धृत प्रिजीलस्की केअनुसार संस्कृत पर आस्ट्रोऐशियाटिक भाषा का प्रभाव है जिसकेसमर्थनमें इन्साईक्लोपिडया ब्रिटेनिका में भी कहा गया है |

लेखक : **देबेन्द्र नाथ चाम्पिया**
HO Documentation : कलामंदिर के साथ साझेदारी

हैरो - पौरोब

प्राचीन समय से "हो" समाज में वह किंदवन्ती प्रचिलत है कि जंगल को कृषि भूमि लायक बनाने के लिए मनुष्य को बहुत किठन परिश्रम करना पड़ा। उस समय खेतों में अनाज बोने के समय माँ लक्ष्मी प्रकट हुई और मनुष्य से कहा "हे मनुष्य मैं तुम से प्रसन्न हूँ, चूंकि तुम कड़ी मेहनत से अनाज पैदा करते हो, तब तुम्हे खाने के लिए अन्न प्राप्त होता है।" उन्होंने आगे कहा - "तुमलोग मेरी दुर्गति कर रहे हो, क्योंकि मुझे धूप, पानी, कीचड़ में डाल देते हो और फसल तैयार होने पर चींटी रानी और उनके संबंधी अपने-अपने बिलों में ले जाते हैं, तो मुझे कष्ट होता है। इसिलए मैं अब तुमलोगों के क्षेत्र में नहीं रहना चाहती हूँ। और यह भी कहा कि अगर तुम सभी सेवा, मेरे कहे अनुसार करोगो तो मैं रह सकती हूँ। "अंत में, मनुष्य ने माँ लक्ष्मी से अनुरोध कर, उनके बताये गये तरीके से सेवा प्रारंभ करने का वचन दिया, आज भी यह प्रचिलत है। अतः आज भी "ग्राम-देआउली" के नाम पर एक बकरा (काला रंग) बिल दिया जाता है। साथ ही हल में जोतने वाले पशुओं को खाना दिया जाता है, सींग एवं गर्दन में तेल लगाया जाता है और "टोकरी", "टुनिक", दरवाजा, खिड़की में होलोड (चावल का आटा) से चित्रकारी की जाती है। उन्होंने उन्हें आर्शीवाद दिया कि मेरी सेवा करने पर तुम सदा सुखी रहो। इस प्रकार आज भी माँ लक्ष्मी के बताये गये तरीके से गोड़ा धान बुनते समय सर्वप्रथम तीर गाड़कर (तो और हेसेल पौधा) धान बुनना प्रारम्भ करते हैं। धान बुनने का काम (गोड़ा धान), भारी धान इत्यादि समाप्त होने के बाद ही "हेरो पोरौब" मनाया जाता है।

एक बैठक आयोजित किया जाता है, जिसमें "हेरो पर्व" मनाये जाने की तिथ निर्धारित होती है। सावन में यह पर्व होता है, जब खेतों में भरपूर पानी हो, फसल हरी-भरी हो, खेतों में हरियाली हो जिससे खेलों में हल चलाया जा सके अर्थात "कड़ान" किया जा सके। ऐसा कहा जाता है कि आदि मानव ने जब कृषि कार्य प्रारम्भ किया, खेतों में धान का पौधा दूरन्दूर (फासले) में उग आया था, पानी भी कम मात्रा में था, उसे गुस्सा आ गया और उसे नष्ट करने के ख्याल से हल चलाकर रौंद डाला और खेतों की ओर कभी रूख नहीं किया। परन्तु कुछ दिन बीतने के बाद वह पाया कि उसको खेत धात के पौधों से हरा-भरा और खेत लहलहाने लगा। इस प्रकार यह कार्य एक प्रथा बनकर आया। 'हेरो पर्व' इसी उद्देश्य से मनाते है कि "कड़ान" एवं रोपा का काम आरम्भ हो सके। ऐसा विश्वास है कि त्योहार मनाये बिना "कड़ान" कार्य करने से फसल की बर्बादी होगी और अच्छी फसल तैयार नहीं होगी धान, गेहूँ एवं अन्य फसल तैयार नहीं हो पायगी अच्छी मात्रा में।

इस त्योहार में प्रत्येक परिवार अपने खेतों में पेूजा-पाठ करते हैं। इस अवसर पर बकरा बिल देकर 'ग्राम-देवता' तथा परिवार के सभी पुरखों को याद करते हुए आस-पास के जंगल, पहाड़ों, वृक्षों पर बसने वाले देवी-देवताओं का आह्वान करते हुए समय पर वर्षा करवाने, फसलों की सुरक्षा करने तिाा चल-अचल समपित्त की प्राकृतिक प्रकोप से सुरक्षा की प्रार्थना एवं पूजा की जाती है।

आज उस विश्वास के आधार पर प्रत्येक गांव में "दिउरि" ग्राम देवता "देआउलि" के नाम बकरा बलि देता है। परन्तु प्रत्येक गांव में ऐसा नहीं होता है, अर्थात एकरूपता नहीं है। अधिकांश गाँव में प्रत्येक परिवार में यह पूजा होती है। प्रत्येक परिवार बकरा बिल देता है। निर्धारित ितिथ के पहले पर्व में उपयोग आने वाली वस्तुओं एवं समानों को (जैसे - सूप, हन्डि, चला -ैजंपदमतए चारि :- जीपद इउइवव चपद पत्ता निकट बाजार से खरीदते हैं। उड़ीसा में मनाये जाने वाले "गोमा पर्व" से पहले डेरो : मनाया जाता है कि अगर "गोमा" के बाद यह पर्व मनाया जाता है तो देआउली का आक्रोश ग्रमीणों को सहना पड़ेगा और उनके पशुधन कह क्षति बाघ जंगली जानवर द्वारा किया जा सकता है। क्योंकि "गोमा पर्व" में चावल पाउडर का प्रयोग करते हैं और देसाउलि में प्रवेश करने से अपिवत्र होगा और ग्रामीण जनता को 'देसाउलि' के आक्रोश का सामना करना पड़ेगा अतः पहले हेरो पर्व मनाया जाता है।

निर्धारित दिन आने पर पूजा में लगने वाले सामान का प्रबन्ध करना होता है और उसे एक जगह एकत्रित किया जाता है। जैसे - "हेसेल वृक्ष" का टुकड़ा (सरला), "साधुःधास" एक बाँध कर और एक बर्तन मिट्टी (मटिया) का हो, जिसमें पानी भर कर पूजा स्थान-गांड़ा खेत में "दिउरी" साथ में अन्य व्यक्ति पहुंचते हैं। पूजा कार्य में 'दिउरी' एवं अन्य सभी उपवास में होते हैं। बकरा बलि देने के लिए ले लिया जाता है और मुर्गी की बलि दी जाती है। पूजा स्थान में पहुंच कर सभी सामानों को सही जगह पर रखकर बँधा हुआ वृक्ष का टुकड़ा एवं धास को जमीन पर गाड़ दिया जाता है और पूजा स्थान साफ कर उसमें थोड़ा गोबर से लिया जाता है और पूजा प्रारम्भ होती है।

पूजा :- हे साउली माँ बुरू हेरचटाः गोड़ा, सिःवटाः गोड़ारे अगोमेतनाण बोकड़ बोदा डला चउति अम् तं गिमे होरायमें, नेलेमे, होया को गामाको किरणंइजु केयाइजुः उमे, रिंगा के केतारके बेरेदाः ओकोए सेवामेया, आकोय सड़ामेयाः। तिसिंण होरोः पोरोब रैया बालेएः गोड़ा, बोकड़ो बोदा ते डिंजी मुन्डु जोरोः मेयाः नताएः मेरा सिम गिरूमनेः बिदा मेतनाएः।।

इसका अर्थ है कि हे "देसाउलि" माँ-बुरू आज "हेरो-पर्व" के अवसर पर हम तुम्हें बकरा बलि देकर प्रसन्न कर रहे हैं। तुम्हारी प्रसन्नता के लिए मुर्गा अर्पण कर रहे हैं। इसका उद्देश्य है कि तुम हमारी फसल की रक्षा एवं सुरक्षा करना आज हम इन वस्तुओं की सेवा कर रहे हैं। गोड़ा जमीन में या हल चला हुआ जमीन पर खड़े होकर आज तुम से प्रार्थना कर रहे हैं कि हवा, वर्षा प्रयाप्त एवं नियमित ढंग से हो जिससे हमारी फसल अच्छी हो। आकाल आदि होने पर हम तुम्हारी सेवा नहीं कर पायेंगे। अतः आज तुम से प्रार्थना कर रहे हैं कि हमारी फसल अच्छी हो, इसका उपाय करें। 'देसाउलि माँ बुरू'।

इस तरह पूजा समाप्त होने के बाद 'दिउरि' और उनके सहयेगी सभी मिलकर भात हौर माँस बनाते हैं। हड़िया बनकर तैयार होने के बाद सबसे पहले 'देसाउलि' के नाम थोड़ा हड़िया, रसि और मांस पूजा में अर्पित किया जाता है और इसके बाद सभी मिलकर हड़िया पीते और बाद में खाना खाकर घर वापस आते हैं। अलग-अलग गाँव में 'हेरो पर्व' में प्रत्येक परिवार बकरा बिल देता और सपरिवार गोड़ा खेत में ही पिकिनक की तरह मनाते हैं। परन्तु अधिकांश गांवों में ऐसा नहीं होता है। दिउरि घर आकर 'हाम-होड़ो' के नाम हिड़या भारत-पूजा करते हैं। पूजा इस प्रकार हैः-

"तिसिंण दो हाम् होड़ो को, अलिंण तिसिंण्दो जोकड़ो बोदा डला चउलिः तोलकेडाः हेरोः पोरोबरेयाः देसाउलि दो हिन्जी मुन्डु जोरोः मुन्डु आईयांणा बाब सारः कोवे सार हेर चचा केड बिड चबाकेरेंण सुसि परोम ओमोरन परोमेयानरेः बोकड़ो बोदा डला चडिल तेण सेवाः पूरा सड़ा पुरायाः। ंतिसंण दो बोकड़ो बोदा आगोम्केयते तोल केसते डियांग को न्युःजोमगदाचुः तेरा कुला को दो बुगियाकनबुः नपायाकनुबः।।

पूजा के रूप में जो बातें कही जाती है, वह इस प्रकार है। आज हम 'देसाउलि को बकरा बिल देकर प्रसन्न कर रहे हैं। 'हेराः' पर्व के दिन प्रार्थना कर रहे हैं कि खेतों में धान एवं अन्य फसल बोने का कार्य समाप्त होने के बाद तुम्हें सभी चीजें अर्पित कर रहे हैं। आज हम सेवा का कार्य पूरा कर रहे हैं। सांप, बाघ आदि से हमारी सुरक्षा करें। इस प्रकार 'हेरो : पर्व' में गोड़ा खेत में तीर-गाड़ कर इस पूजा प्रक्रिया को पूर्ण करने को 'हेरोः पर्व' कहते हैं।

'हेराः गुरिः

आज का दिन वास्तव में हेरोः पूजा के लिए विशेष तैयारी का दिन होता है। आज सबों के घरों में साफ-सफाई करने का दिन होता है। साज-समानों की व्यवस्था करनी होती है, जरूरत पड़ने पर बाजार से खरीदारी की जाती है। शाम को 'दिउरि' और गांव के प्रत्येक घरों में लोग अपने-अपने पूर्वजों की याद में हिड़या, रिस और भात पूजा में आर्षित करते हैं। और लोग हंसी-खुशी एक दूसरे के घरों में जाकर खुशिया मनाते हैं।

हैरो : जैसे आगे लिखा जा चुका है, वास्तव में आज के दिन ही 'दिउरि' गोड़ा खेत (पूजा स्थल) में बकरा बिल देता है, जिसमें 'हेसेल वृक्ष' का टुकड़ा में सायु : घास बांध कर गोड़ा खेत पूजा स्थल में बोड़ा गाड़ा जाता है। इसके बाद ठीक सही समय मे 'दिउरी' बकरा के साथ में लिए हुए एवं अन्य आवश्यक सामान लेकर पूजा स्थल पहूंच कर साफ करता है, तब उसे गोबर देकर उसमें चावल पाउडर से 10 से 12 खाना बनाया जाता है। इसमें चावल डालकर पूजा प्रारम्भ करता है और इसके बाद बकरा बिल देता है। अन्त में मुर्गी पूजा करता है।

इस प्रकार हेरो : पूजा प्रत्येक गांव में हाती है और स्थान-स्थान में प्रत्येक परिवार स्वयं करता है।

पूजा : 'तिसिण दो 'देसाउलि' अगोमलेड, जोबलेड वचन लेडतेया, दिली लेडतेया दो बोकड़ो बोदा डला चउलि ते दोंग सेवामेतानांय मेतान्यंगण होयो कीदो गामा कीदो किरिण इजु केयाइजु गेदाम, मेरा कुटि मेरा लंकाएते, बबा सांर कोदे सांर कोदो, लेनेः हेतेः गुलेः बुटाइनुंग गॉ इनुगका।

मेरा लाई हसुःको, होन गनाः मिसी को बुगियाकन नपाया कनोकाकोः। मेरा सियु अरिः सियु हाड़ा की, सिंयुः केड़ाकोबुगिया कनोकाः को।।

मेरा सियु अरिः सियु हाड़ा को, सियुः केड़ाकोबुगिया कनोकाः को।।

सिरमा उदुव केन को, ओते उदुव केनको, विरगुनि होन को, ओतेगुनि होन को, सिरमा सोटोरोंगा, ओते सोटोरोंग होन कोए काजियाकोवाएः।।

अर्थः- पूजा की मूल बातें इस प्रकार है। पूजा में सर्वशक्तिमान ईश्वर से प्रार्थना करते हुए ग्राम देवता 'देसाउलि' के नाम निवेदन करता है कि जो वचन मैंने लिया था, वह कार्य आज बकरा बलि पूरा कर रहा हूँ। मैंने देसाउलि से बचन लिया था कि फसल की रक्षा, उसकी अधिक उपज प्राप्त करने और ग्रामिणों, पशुओं की रक्षा करने पर मैं बकरा बलि दूंगा आज वह दिन पूरा हो गया है इसलिए आज सूप में चावल रखकर बकरा बलि दे रहा हूं, पूजा कार्य पूरा कर रहा हूं। धान की फसल, अन्य अनाज हरा भरा हों, अधिक मात्रा में उपज प्राप्त हो। ग्राम देता और अन्य देवताओं का नाम लेकर पूजा समाप्त करते हैं। उसके बाद वहीं गोड़ा खेत में खाना, मांस पकता है। सर्वप्रिाम हड़िया बनाकर 'देसाउलि' के नाम पूजा में दी जाती है। इसके बाद भात एवं मांस भी 'देसाउलि' के नाम पूजा में दी जाती है। सभी मिलकर हड़िया पीते हैं और खाना खाते हैं। उसके बाद शाम को घर लौटते हैं यों यह तो हुआ 'दिउरि' और अन्य सहयोगियों का पूजा संबंध कामा दूसरी ओर गांव के प्रत्येक परिवार में किये जाने वाले पूजा प्रक्रिया से संबंधित व्यवहार से है।

हेरोः पर्व के दिन प्रत्येक परिवार में खाना तथा वर्तन में ही पकाया जाता है। सुबह ही जंगल से तरोब वृक्ष (क्षर वृक्ष) की डाली एवं करचूल बनाने के लिए साल वृक्ष की डाली लाया जाता है। सुबह 11 बजे स्नान आदि से निवृत होकर घर की महिलायें तैयार हो जाती है। कोई मां या दादी खाना बनाती है। वह सभी लोगों के लिए तो बनाती ही है बल्कि विशेषरूप से जिस घर में 'सुटाम' भात पकाने का रिवाज हो, वहां अलग से वह अपने लिए अकेले का खाना बनाती है और अकेले ही 'अदिंग' (रसोई घर) में चार बजे तक खा पीकर तैयार रहती है। पूर्वजों के नाम पूजा करने के बाद वह खा लेती है और बाद में सभी खाते हैं। क्योंकि इसके बाद शाम को बैल और भैंसों को (हल जोतने वालों को)आंगन में खाना खिलाया जाता है। यह दिवस (विशेषकर शाम के समय) बैलों, गायों और भैंसों के नाम पूजा अर्पण होता है क्येंकि भारतीय परम्परा के अनुसार पूजनीय मानी जाती है वहीं बैल और भैंस के प्रति कृतज्ञता का भाव व्यक्त करने के लिए इस दिवस को मनाया जाता है। उनके सींगों को

साफ कर तेल लगाया जाता है। उनके गले में घंटिया बांधी जाती है। फूल माला भी पहनायी जाती हैं। इस प्रकार इसकी संस्कृति मूल रूप से सादा संस्कृति है। इसके अतिरिक्त मवेशियों के प्रति दया एवं प्रेम का भावना से स्पष्ट होता है कि इनकी संस्कृति में सभी जीवों के प्रति करूणा एवं दया का दृष्टिकोण प्रारंभ से अपनाया जाता रहा है।

ऐसे इनके प्रत्येक एवं सदभाव एवं भाईचारे के रूप में मनाये जाते है। लोग एक दूसरे को खाद्य पदार्थ देते हैं। इन पशुओं के गले में पहले से ही घंटी बांध दी जाती है। खाना खिलाने के बाद इन बैलों और भैंसों के सींगों और गर्दन में तेल लगाया जाता है और अन्त में नमक खिलाया जाता है। ऐसा कहा जाता है जिनकी सहयोग से वर्ष भर खेती एवं अन्य कार्य करते हैं उन्हें वर्ष में एक बाद कम से कम खाना खिलाया जाना चाहिए। ऐसा विश्वास किया जाता है कि मां लक्ष्मी के आदेशानुसार इन पशुओं की सेवा का मौका वर्ष में एक बार आता है। चावल पाउडर को थोड़ा पानी में घोल कर साफ पानी में धोया हुआ विभिन्न सामानों (कृषि कार्य में आने वाला) पर चित्रकारी की जाती है। जैसे - हल, बैलगाड़ी, कॉछी, टोकरी, सूप, 'पतकि' दरवाजों, खिड़कियां आदि में चित्रकारी की जाती है। सभी काम समाप्त होने के बाद 7 बजे रात में नयी हण्डी में एक पत्ता, साल दातुवान को हण्डी के अन्दर अच्छी तरह सजाकर चावल पाउडर से इडली की तरह पकाया जाता है। पकने के बाद पूर्वजों के नाम पूजा में 'हेरोः लाउ' देने के बाद सपरिवार खाते हैं और दूसरे दिन भी इसे खाया जाता है। परन्तु सभी परिवार में यह प्रथा लागू नहीं है। कुछ लोगों में यह नियम लागू नहीं है। अतः वे बैल और भैंसों को खाना न खिलाकर केवल नमक खिला कर छोड़ देते हैं। इस प्रकार 'हेरोः पर्व' मनाया जाता है।

इस प्रकार हेरोः पर्व आदिवासी के 'हो' समाज में होता है, जो मूलतः कृषि से संबंधित है। 'हेरोः पर्व' आरम्भ होने के साथ ही रात में नाच-गान होता है। यह नाचना-गाना तीन दिनों तक चलता रहता है। गाँव के सभी व्यक्ति इसमें हिस्सा लेते हैं और आनन्द खुशी मनाते हैं। विशेषरूप से लड़के-लड़कियां अधिक हिस्सा लेते हैं।

हेरोःबसि : "हेरा : बसि" के दिन "दिउरी" अथवा उसके कोई एक सहयोगी राख लेकर पूजा स्थल में उसे डालता है और एक कुदाल से थोड़ा सा मिट्टी पहले डालता है, इसके बाद ऊपर से राख डाल देता है। परन्तु सभी गांवों में ऐसा नहीं किया जाता है। आज के दिन एक अन्तिम कार्यक्रम पूरा करने का दिन होता है। इडलीव वासी पीटा गरम कर पूर्वजों के नाम पहले पूजा में दी जाती है। थोड़ा हड़िया भी। इसके बाद खाते हैं और हड़िया आदि पी जाती है। इस तरह से 'हेरोःपर्व' समाप्त होता है।

हेरोः- पर्व मनाने के पहले धान के पौधे में हल नहीं चलाया जाता है। परन्तु वर्तमान समय में परिस्थिति को देखते हुए हेराः के पहले भी कड़ान किया जाता है। ऐसी कुछ वस्तुए जिसका सेवन पहले नहीं किया जाता है जैसे - कई प्रकार के छतुः जिसमें मराः कटाः उड, इन्दि उद, बायाड आः, मटा आः (विशेष प्रकार का साग-

साब्जी) गोरेण आः इत्यादि। ऐसी धारणा है कि पर्व के पहले यदि इसे खाया जाय तो बाध, सिंहए बिरूछुए साप आदि द्वारा पशुओं मनुष्यों को हानि पहुंचाया जायेगा 'देसाउलि', ग्राम देवता' की नाराजगी से बीमारी से प्रकोप हो सकता है। ग्रामीण जनता को कई प्रकार के परेशानियों का सामना करना पड़ सकता है। ऐसा लोगों की अभी भी विश्वास है। इस तरह हेरी पर्व के मनाने के पीछे कृषि फसल के उत्पादन से संबंधित कारण होता है। पशुओं ओर ग्रामीणों की रक्षा के लिए 'देसाउलि' 'ग्रामीण-देता', से प्रार्थना की जाती है। नागे एराः, बिन्दि एराः से बिनती की जाती है।

आधुनिक वैज्ञानिक युग में कृषि उत्पादन प्रणाली के वैज्ञानिक तरीके ने यह साबित कर दिखाया है इन तरीकों का उपयोग कर कृषि पैदावार कई गुनी बढ़ायी जा सकती है। अकाल से लड़ सकने का सामर्थ्य सब लोगों में है। चिकित्सा के क्षेत्र में विकास ने आधुनिक समय में हर तरह के बिमारियों पर काबू पा लिया है। अतः कुछ बातें तर्कसंगत नहीं लगती है। परन्तु समाज की अपनी संस्कृति होती है, अपना रिवाज, परम्परा होती है। उसे छोड़ देना अधिक मूर्खता होगी। इसलिए आधुनिक समय के साथ कदम से कदम मिला कर उसे विश्वास एवं संस्कृति में विकास की आवश्यकता है। विकास सहयोग एवं प्रेरणा का स्त्रोत हो, ऐसा परिवर्तन होना चाहिए। संस्कृति को उच्च स्तर तक ले जाया जाना चाहिए जिससे समाज एवं कृषि के विकास में सहायक हो सके।

लेखक : **डॉ0 जे0 एस0 पिंगुआ**
HO Documentation : कलामंदिर के साथ साझेदारी